पैरवी संवाद

पब्लिक एडवोकेसी इनीशिएटिव्स फ़ॉर राइट्स एण्ड वैल्यूज़ इन इण्डिया

जनवरी 2017

इस अंक में...

2 **क्या हुआ माराकेश जलवायु बैठक में**
- अजय झा

4 **शरणार्थी नीति के अभाव में गहराता संकट**
- दीनबंधु वत्स

7 **स्वच्छ भारत अभियान या शौचालय अभियान**
- मैराज फ़ातिमा

10 **मेक इन इण्डिया: संभावना और आशंका**
- शगुन थपलियाल

13 **ख़तरे में विश्व धरोहर सुंदरवन**
- नदीम अहमद

15 **पैरवी गतिविधियाँ**

संपादक मंडल
प्रो. संजय भट्ट
अजय के. झा
रजनीश साहिल

संपादन सहयोग
मैराज फ़ातिमा

संपादकीय

प्रिय साथियो,

वर्ष 2017 में आपका स्वागत है। यह आने वाले समय के लिए शुभकामनाएँ व्यक्त करने का अवसर है। औपचारिकता का नियम भी यही है, लेकिन हम थोड़ा अनौपचारिक होना चाहते हैं। वजह यह कि बीते वर्ष में जो कुछ घटित हुआ उसका असर वर्ष के बीतने के साथ समाप्त नहीं हो जाता, और आने वाले समय के शुभ होने को वह प्रभावित करता ही है। बीते वर्ष में देश-दुनिया में बहुत कुछ घटा जिसमें से कुछ ने हमारी-आपकी रोज़मर्रा की ज़िंदगी पर असर डाला, कुछ ने देश की सेहत पर असर डाला और अमेरिका के राष्ट्रपति चुनाव जैसी घटनाओं ने तो कई देशों के रक्तचाप को प्रभावित किया। बीते साल माराकेश में सम्पन्न हुई जलवायु बैठक (कॉप) भी इससे अछूती नहीं रही। अमेरिका विकसित देशों का अगुआ है और जलवायु बैठक में यह सवाल छाया रहा कि अमेरिका का रुख़ क्या होगा।

देश के भीतर जब हमारे किसान प्राकृतिक-आर्थिक आपदा झेलने के बावजूद गेहूँ की बम्पर फ़सल पैदा कर रहे थे और उचित मूल्य न मिलने की शिकायत कर रहे थे, तब सरकार ने गेहूँ पर आयात शुल्क ख़त्म कर दिया। और यह तब जबकि यह तथ्य बहुत स्पष्ट है कि खेती से जुड़े हज़ारों लोगों को दूसरे शहरों/राज्यों को अपनी शरणस्थली बनाना पड़ा है मज़दूरी करने के लिए। यह चिंता का विषय है कि सरकार न तो उनके प्रति गंभीर दिखाई देती है जो अपने ही देश में शरणार्थी हुए जा रहे हैं, न ही उनके प्रति जो देश की सीमाओं को पार कर शरणार्थी बने हैं। नागरिकता अधिनियम 1955 में संशोधन पर विशेषज्ञों की टिप्पणियाँ यही ज़ाहिर करती हैं।

हम इस अंक में सरकार के दो मुख्य कार्यक्रमों - स्वच्छ भारत अभियान और मेक इन इण्डिया - का विश्लेषण भी दे रहे हैं। जहाँ इन कार्यक्रमों में कई संभावनाएँ हैं, अभी तक के परिणाम संभावनाओं से काफ़ी दूर दिख रहे हैं।

बीते वर्ष की ऐसी कई घटनाओं का अच्छा-बुरा असर आने वाले समय में ही बेहतर नज़र आएगा पर अभी तो देश-दुनिया आशंकाओं के साये में हैं। हम भी इस अंक में कुछ आशंकाएँ आपके सामने रख रहे हैं। इन पर विचार हो और समाधान तलाशने का प्रयास हो, यही हमारी शुभकामना है।

धन्यवाद।

- संपादक मंडल

क्या हुआ माराकेश जलवायु बैठक में

अजय झा

नवंबर 7 से 18 तक जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्रसंघ के तत्वाधान में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय बैठक मोरक्को के शहर माराकेश में हुई। पिछले साल यह बैठक पेरिस में हुई थी जहाँ 193 देशों ने साथ मिलकर जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए पेरिस समझौता किया था जिसे बड़े अंतर्राष्ट्रीय समूह ने ऐतिहासिक और मील का पत्थर माना था। सभी देशों के बीच सहमति सचमुच ऐतिहासिक थी, लेकिन उनके प्रयासों की गहराई पर कई समूहों ने चिंता भी व्यक्त की थी। बहरहाल, पेरिस की (कथित) अपार सफलता के बाद माराकेश बैठक वैसी ही थी जैसी मूल अधिनियम बन जाने पर नियम की बैठक होती है। शुरू में जोश कम था लेकिन 4 नवंबर को पेरिस समझौता लागू होने से बैठक में गर्मजोशी बढ़ी। इस बैठक पर पेरिस समझौते को लागू करने के नियम बनाने की ज़िम्मेदारी थी। मेज़बान मोरक्को ने इसे 'एक्शन कॉप' यानी बातचीत के बजाय 'कामकाजी बैठक' का नाम दिया था। हालांकि ऐसा बहुत कुछ देखने में नहीं आया।

अमरीकी चुनाव के बादल

7 नवंबर से शुरू हुई बैठक का पहला सप्ताह, 8 नवंबर को अमरीकी राष्ट्रपति के चुनाव में डोनाल्ड ट्रंप की जीत के साये में रहा। ट्रंप पहले ही जलवायु परिवर्तन को चीन का ईजाद किया हुआ ढकोसला बता चुके हैं। उनका यह भी मानना है कि पेरिस मसझौते से अमरीकी कंपनियों और ख़ासकर ऊर्जा व बिजली कंपनियों को घाटा होगा, नौकरियाँ कम होंगी, इसलिए अमरीका को यह क़रार नहीं मानना चाहिए। अतः जहाँ पेरिस समझौते को जलवायु संकट के समाधान का अंतिम और एकमात्र उपाय माना जा रहा हो, ऐसी बैठक में ट्रंप की जीत से चिंता होनी ठीक ही है। ट्रंप की सोच चिंताजनक है क्योंकि अमरीका को जलवायु ऋण चुकाने के लिए बहुत कुछ करना है, अपनी धरती पर भी और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के संदर्भ में भी। हालांकि ऐसी विकट परिस्थिति में

भी (अमरीका सहित) सभी देशों ने पेरिस समझौता और जलवायु संकट से संघर्ष जारी रखने का विश्वास वहाँ के प्रतिभागियों को दिया, जिससे बैठक पर गहराते संकट के बादल कुछ दूर हुए। यह बैठक की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि रही।

माराकेश के मुख्य मुद्दे

माराकेश बैठक से क्या हासिल हुआ? कुछ गहराई से ढूँढने की कोशिश करें तो निराशा ही हाथ लगती है। विकासशील देशों के लिए इस बैठक में सबसे महत्वपूर्ण बात थी विकसित देशों का 2020 से 10,000 करोड़ अमरीकी डॉलर देने का रोड मैप। इसके अलावा उनकी अपेक्षाओं में अनुकूलन, हानि और क्षतिपूर्ति की बातचीत और प्रयासों में विकसित देशों की प्रतिबद्धता, और 2020 से पहले किए जाने वाले उनके प्रयासों (पेरिस समझौता 2020 या 2018 से लागू होगा) पर स्पष्टता थी। इन सभी मुद्दों पर विकसित देशों का रवैया वही ढाक के तान पात सा रहा। ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया द्वारा किए गए शोध के अनुसार विकसित देशों ने 2014 में विकासशील देशों को 6,200 करोड़ अमरीकी डॉलर दिया, हालांकि राष्ट्रसंघ के शोध ने वह राशि 26.6 बिलियन डॉलर बताई। अंतर काफ़ी ज़्यादा था और तकरार की गुंजाइश भी, सो हुई। हासिल कुछ नहीं हुआ।

कुल मिलाकर यह तय रहा कि नियम बनाने की प्रक्रिया 2018 तक चले और तब पेरिस समझौते को अमल में लाया जाए। इसका मतलब है कि सारे गंभीर मुद्दों पर निर्णय दो साल के लिए और टल गए। विकसित देशों ने डर्बन (2011) और दोहा (2012) में किए गए करार जिसमें सभी देशों ने यह माना था कि वह 2020 से अपने उत्सर्जन में

रिपोर्ट ने जलवायु परिवर्तन को झेलने के प्रयासों अर्थात विकासशील देशों में अनुकूलन के उपलब्ध संसाधनों में काफ़ी निराशाजनक कमी बताई। इसके अनुसार कुल संसाधन का एक-तिहाई से भी कम ग़रीब देशों व विकासशील देशों को अनुकूलन के लिए उपलब्ध है।

और कमी लाऐंगे और विकासशील देशों को ऐसा करने के लिए आर्थिक संसाधन, तकनीक और क्षमता उपलब्ध कराऐंगे, पर ज़्यादा ध्यान नहीं दिया। ज़्यादातर बातचीत 2020 के बाद क्या किया जाए, इस पर ही केंद्रित रही।

कुछ नई-सी जानकारी

बैठक शुरू होने से कुछ दिन पहले राष्ट्रसंघ के पर्यावरण कार्यक्रम ने दो रिपोर्ट निकालीं, जिसमें कुछ तथ्य सामने आए। हालांकि यह तथ्य बिल्कुल नये नहीं हैं लेकिन चिंताओं को और ताज़ा करते हैं। 'एमीशन गैप रिपोर्ट 2016' ने स्पष्ट किया कि 'पेरिस समझौता' सदी के अंत तक तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस पर रोकने में अक्षम है, और इन वादों के अच्छी तरह से पूरा हो जाने पर भी धरती का तापमान कम से कम 2.9 डिग्री सेल्सियस से लेकर 3.5 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ेगा। शोध का कहना है कि सभी देशों को अपने वायदे से अधिक 25 प्रतिशत उत्सर्जन और कम करना होगा तभी तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस पर रोका जा सकता है जो कि पेरिस समझौते का मूल लक्ष्य है। रिपोर्ट का कहना है कि उत्सर्जन कम करने के प्रयासों में देरी बाद में इस चुनौती को और मुश्किल और महँगा बनाएगी। 2020 से पहले किए गए त्वरित और ईमानदार प्रयास से ही पेरिस समझौते का सही अमल संभव है।

दूसरी रिपोर्ट ने जलवायु परिवर्तन को झेलने के प्रयासों अर्थात विकासशील देशों में किए अनुकूलन के उपलब्ध संसाधनों में काफ़ी निराशाजनक कमी बताई। इसके अनुसार कुल संसाधन का एक तिहाई से भी कम ग़रीब देशों व विकासशील देशों को अनुकूलन के लिए उपलब्ध है। इस राशि को 2030 तक 6 से 12 गुणा और 2050 तक 15 से 22 गुणा अधिक करना पड़ेगा तभी विकासशील देश जलवायु संकट के प्रभावों से उबरने में सक्षम होंगे। विकसित देशों ने इन दोनों शोध और उसके निष्कर्ष पर कोई ख़ास ध्यान नहीं दिया।

इसके साथ एक नई-सी जानकारी यह भी है कि पिछले 18 महीनों में सभी महीने गर्मी के एक-दूसरे के रिकॉर्ड लगातार तोड़ रहे हैं। जहाँ सितंबर पिछले 137 साल में सबसे गर्म सितंबर था। जुलाई और अगस्त सभी महीनों के औसत तापमान वृद्धि में 1800 ई. के बाद से सबसे गर्म महीने थे। आशंका है कि तापमान वृद्धि महीने दर महीने और साल दर साल बढ़ती रहेगी। इस महीने यह भी जानकारी आई है कि वैश्विक तापमान औद्योगिक क्रांति से पूर्व के तापमान के मुक़ाबले एक डिग्री बढ़ गया है। इससे पहले हम लोग सब 0.8 डिग्री ही लिख और बता रहे थे।

ख़ैर, अगली बैठक 2017 के अंत में फ़िजी की अध्यक्षता में बॉन, जर्मनी में होगी। तब तक गर्मी बढ़ती रहेगी और मामला ठंडा रहेगा। ■

शरणार्थी नीति के अभाव में गहराता संकट

दीनबंधु वत्स

आज़ादी के बाद से ही नागरिकता क़ानून भारत में एक संवेदनशील मुद्दा रहा है। नागरिकता क़ानून 1955 में अब तक पाँच बार संशोधन हो चुके हैं। इस क़ानून में छठी बार संशोधन करने के उद्देश्य से गृह मंत्री राजनाथ सिंह ने 19 जुलाई 2016 को लोकसभा में नागरिकता (संशोधन) बिल 2016 पेश किया। यह बिल नागरिकता क़ानून 1955 में संशोधन का प्रावधान करता है। इसके अंतर्गत पाकिस्तान, अफ़गानिस्तान और बांग्लादेश से आए हिन्दू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और इसाई धर्मों के अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों को भारत की नागरिकता प्राप्त करने का प्रावधान है, चाहे उनके पास ज़रूरी दस्तावेज़ हों या नहीं। इसका लाभ उन लोगों को मिलेगा जिन्होंने बिना पासपोर्ट एवं वीज़ा के भारत में प्रवेश किया या उन दस्तावेजों की वैधता समाप्त हो गई हो। अब तक नागरिकता अधिनियमों के प्रावधानों के तहत इन्हें अवैध प्रवासी माना जाता था, और वह भारतीय नागरिकता के लिए आवेदन नहीं कर सकते थे। लेकिन नए संशोधन के प्रावधानों के तहत अब ऐसे लोगों को अपवाद की श्रेणी में रखा जाएगा और भारतीय नागरिकता के लिए आवेदन के पात्र माने जाऐंगे।

बांग्लादेश, पाकिस्तान और अफ़गानिस्तान के कितने प्रवासी भारत में रह रहे हैं इसका अधिकृत रूप से कोई सरकारी आंकड़ा मौजूद नहीं है। लेकिन मोटे तौर पर अनुमान लगाया गया है कि इन देशों के करीब दो लाख प्रवासी देश के विभिन्न राज्यों, जैसे राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, असम, उत्तर प्रदेश और दिल्ली में रह रहे हैं।

प्रस्तावित विधेयक के माध्यम से नागरिकता अधिनियम, 1955 की अनुसूची 3 में संशोधन करते हुए नैसर्गिक नागरिकता प्राप्त करने के लिए 11 वर्ष से घटाकर 6 वर्ष कर दी है। वर्तमान नागरिकता क़ानून के तहत नैसर्गिक नागरिकता के लिए 11 वर्ष तक देश में रहना ज़रूरी होता है। ग़ौरतलब है कि नागरिकता अधिनियम 1955, नागरिकता प्राप्त करने के विभिन्न तरीकों को स्पष्ट करता है जिसमें जन्म, वंश, पंजीकरण, देशीयकरण, और भारत में किसी परिक्षेत्र के समावेश द्वारा नागरिकता मिलने की बात कही गई है। इसके अतिरिक्त यह अधिनियम भारतीय कार्डधारकों एवं भारत मूल के विदेशी नागरिकों के पंजीकरण और उनके अधिकारों को नियंत्रित करता है। बहरहाल, इस संशोधन अधिनियम को 30 सदस्यों वाली संयुक्त संसदीय समिति को सौंप दिया गया है। भाजपा सांसद श्री सतपाल सिंह इस समिति के अध्यक्ष हैं। इस समिति को संसद के इसी शीतकालीन सत्र में रिपोर्ट प्रस्तुत करनी थी पर इसका कार्यकाल और बढ़ा दिया गया है। अब संयुक्त समिति अपनी रिपोर्ट अगले वर्ष बजट सत्र में प्रस्तुत करेगी।

यह बिल भारत के नागरिकता क़ानून में महत्वपूर्ण परिवर्तन कर रहा है जिसके दूरगामी परिणाम होंगे। अगर यह बिल क़ानून में तब्दील हो गया तो इन तीन देशों के प्रवासियों, जिनमें अधिकतर हिंदू हैं, को लाभ मिलने की उम्मीद है। लेकिन आलोचकों का मानना है कि यह बिल विभेदकारी है और पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफ़गानिस्तान के अल्पसंख्यक समुदायों ख़ासकर हिन्दुओं के हितों को ध्यान में रखते हुए लाया गया है। वहीं दूसरी ओर पाकिस्तान के अहमदिया और म्यानमार के रोहिंग्या समुदाय के

> भारत में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पटल पर शरणार्थी नीति के अभाव और एकरूपता में कमी को ख़त्म करने के महत्व का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि वर्तमान लोकसभा में शरणार्थियों से संबंधित तीन प्राइवेट बिल पेश किए गए हैं। कांग्रेस पार्टी के शशि थरूर, बीजू जनता दल के रविन्द्र कुमार जेना और भाजपा सांसद वरुण गांधी ने प्राइवेट मेंबर बिल प्रस्तुत किये हैं।

लोग भी अपने देश में अल्पसंख्यक हैं और धार्मिक आधार पर भेदभाव व उत्पीड़न के शिकार हैं। भारतीय मूल के श्रीलंका के प्रवासी भी 1983 की हिंसा के बाद से तमिलनाडु में रह रहे हैं। यह बिल ऐसे प्रवासियों को नागरिकता नहीं दे रहा है। श्रीलंका के प्रवासियों में भी ज़्यादातर हिन्दू हैं। अफ़गानिस्तान के भी हजारा समुदाय के लोग धार्मिक उत्पीड़न के शिकार हैं, लेकिन इस बिल में इसकी भी चर्चा नहीं है। यह विधेयक दूसरे ग़ैर-क़ानूनी प्रवासी जिसमें मुसलमान, यहूदी और बहाई शामिल हैं, उनके हितों को अनदेखा करता है। आलोचकों का मानना है कि यह संविधान के अनुच्छेद 14 की मूल भावना के ख़िलाफ़ है। अनुच्छेद 14 के अनुसार भारत में रह रहे प्रत्येक व्यक्ति जिसमें ग़ैर-नागरिक भी शामिल हैं, को विधि के समक्ष समता का अधिकार है। हालाँकि, सरकार स्पष्ट रूप से उचित तर्क नहीं दे पा रही है कि केवल कुछ ही धर्मों के लोगों को, वह भी केवल तीन ही देशों के प्रवासियों को, भारत की नागरिकता क्यों दे रही है।

बांग्लादेश, पाकिस्तान और अफ़गानिस्तान के कितने प्रवासी भारत में रह रहे हैं इसका अधिकृत रूप से कोई सरकारी आंकड़ा मौजूद नहीं है। लेकिन मोटे तौर पर अनुमान लगाया गया है कि इन देशों के क़रीब दो लाख प्रवासी देश के विभिन्न राज्यों, जैसे राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, असम, उत्तर प्रदेश और दिल्ली में रह रहे हैं। इनमें ज़्यादातर हिन्दू और कुछ सिख हैं। जैन, बौद्ध और इसाई समुदाय के लोगों की संख्या कुछ कम है। इन लोगों को इस समस्या से लाभ मिलने की उम्मीद है, (टाइम्स ऑफ़ इंडिया, अप्रैल 17, 2016)। एक और आँकड़े के अनुसार भारत में वीज़ा समाप्त होने के बाद रहने वाले विदेशियों की संख्या 2014 तक 28 हज़ार से अधिक थी। (इंडियन एक्सप्रेस, 25 अक्टूबर 2016)

असम के अनेक संगठनों और राजनैतिक दलों ने जिसमें सत्तारूढ़ दल के सहयोगी असम गण परिषद भी शामिल है, इस विधेयक का विरोध करते हुए कहा कि यह असम समझौते की भावना के ख़िलाफ़ है। असम समझौते के अनुसार 24 मार्च 1971 की आधी रात के बाद से असम आने वाले विदेशियों को वापस भेजने का प्रस्ताव है। इन संगठनों का आरोप है कि इस बिल के अधिनियम में तब्दील हो जाने के बाद से असम में जन सांख्यिकीय बदलाव आ सकता है और स्थानीय लोगों की संख्या कम हो जाएगी।

भारत आज़ादी के बाद से ही प्रवासियों की शरणस्थली रहा है और उनकी मेज़बानी करता रहा है। विभाजन के बाद भारत व पाकिस्तान में बड़े

पैमाने पर लोगों का पलायन हुआ। पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका जैसे पड़ोसी देशों की घरेलू अस्थिरता के कारण आज भी लोगों का भारत आना जारी है। फिर भी प्रवासियों के लिए कोई केंद्रीय क़ानून नहीं है। उनके अधिकारों की रक्षा और चुनौती से निपटने के लिए कोई विशेष क़ानूनी व्यवस्था नहीं बनाई है। भारत की सरकार प्रवासियों के प्रति राजनीतिक और प्रशासनिक निर्णय के आधार पर कार्य करती है, न कि क़ानूनी व्यवस्था के अनुरूप। हालाँकि किसी भी संहिताबद्ध क़ानून के अभाव में संविधान के तीसरे भाग में वर्णित मौलिक अधिकार के अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 20 से 28 ग़ैर-नागरिकों पर भी लागू होते हैं। वहीं कुछ ऐसे भी मौलिक अधिकार हैं जो ग़ैर-नागरिकों पर लागू नहीं होते, जैसे अनुच्छेद 16 (लोक नियोजन के विषय में अवसर की समानता), अनुच्छेद 19 (स्वतंत्रता का अधिकार), अनुच्छेद 29 (अल्पसंख्यकों की संस्कृति व भाषा संबंधी अधिकार), अनुच्छेद 30 (अल्पसंख्यकों को शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन करने का अधिकार)।

भारतीय न्यायपालिका एक मार्गदर्शक व प्रहरी के रूप में कार्य करती है जो क़ानून के नियम को संरक्षित करती है। उच्चतम न्यायालय में वर्ष 1996 में अपने ऐतिहासिक फ़ैसले (एनएचआरसी बनाम अरुणाचल प्रदेश) में व्यवस्था दी थी कि भारत में रह रहे सभी लोगों, जिसमें ग़ैर-नागरिक प्रवासी भी शामिल हैं, को संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त है और राज्य उनके इन अधिकारों की रक्षा करने को बाध्य है।

भारत ने संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी सम्मेलन 1951 और उसके 1967 के प्रोटोकोल पर हस्ताक्षर नहीं किया है। वर्तमान में संयुक्त रांष्ट्रसंघ के 193 में से 145 देशों ने इस सम्मेलन को स्वीकार किया है जो दुनिया की सरकारों को शरणार्थियों की रक्षा के क़ानून को स्वीकारने के लिए बाध्य करता है। इसके साथ ही भारत ने 1954 में राज्यविहीनता के संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन और 1961 में राज्यविहीनता में कमी लाने के संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन की पुष्टि नहीं की है। हालाँकि भारत ने 1948 के मानवाधिकार के सार्वभौमिक घोषणा-पत्र को स्वीकार किया है जिसके अनुच्छेद 14 के तहत प्रत्येक व्यक्ति को उत्पीड़न से बचने के लिए दूसरे देशों में शरण लेने का अधिकार है। भारत कथित रूप से अवापसी नियम को भी मानता है जिसके तहत कोई भी देश किसी भी शरणार्थी को अपने मुल्क जाने के लिए उसकी इच्छा के विपरीत मजबूर नहीं कर सकता, विशेषकर तब जब उसके जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार का हनन होने के स्पष्ट कारण मौजूद हों।

भारत में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पटल पर शरणार्थी नीति के अभाव और एकरूपता में कमी को ख़त्म करने के महत्व का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि वर्तमान लोकसभा में शरणार्थियों से संबंधित तीन प्राइवेट बिल पेश किए गए हैं। कांग्रेस पार्टी के शशि थरूर, बीजू जनता दल के रविन्द्र कुमार जेना और भाजपा सांसद वरुण गांधी ने प्राइवेट मेम्बर बिल प्रस्तुत किए हैं। संयोग से यह तीनों बिल 18 दिसंबर 2015 को पेश किए गए और फ़िलहाल लोकसभा में लंबित हैं।

पूरी दुनिया में शरणार्थी संकट गहराता जा रहा है। ख़ासकर जब युद्ध की विभीषिका, युद्धोन्माद और जातीय संघर्ष चरम पर हो। यूएनएचसीआर के मुताबिक़ दुनिया में लगभग 6.5 करोड़ लोग अपने घरों से बाहर हो चुके हैं। इसमें 2.1 करोड़ लोग शरणार्थी हैं और आधे से ज़्यादा लोग 18 वर्ष से कम के हैं। हम एक ऐसी दुनिया में रह रहे हैं जहाँ हर रोज़ लगभग 34,000 लोग उत्पीड़न और संघर्ष से बचने के लिए अपने घरों से पलायित होने को मजबूर हैं। पूरी दुनिया के शरणार्थियों में 54 प्रतिशत लोग सोमालिया, अफ़गानिस्तान और सीरिया के हैं। शरणार्थी के लिए संयुक्त राष्ट्र के उच्चायुक्त (यूएनएचसीआर) के अनुसार वर्ष 2015 के अंत तक भारत में 2 लाख से अधिक शरणार्थी थे जिसमें 1 लाख 75 हज़ार से अधिक तिब्बत और श्रीलंका के शरणार्थी हैं।

पूरी दुनिया में जब शरणार्थी संकट बढ़ रहा है भारत उससे अछूता नहीं रह सकता। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य बदलते जा रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय संबंध के मानक मसलन भू-राजनीतिक और भू-आर्थिक समीकरण बदल रहे हैं। जातीय संघर्ष और युद्धोन्माद इस संकट को और गहरा कर रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में हम बिना किसी समग्र और समावेशी क़ानून के नहीं रह सकते हैं। राज्यविहीन और बेघर निरीह लोगों का भविष्य राजनीतिक इच्छा पर नहीं छोड़ा जा सकता। जेएनयू के अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन संस्थान के प्रोफ़ेसर महेंद्रा लामा ने पैरवी द्वारा आयोजित एक परिचर्चा में कहा था कि स्पष्टवादी और व्यापक क़ानूनी व्यवस्था के अभाव ने शरणार्थी के मुद्दे व उनके प्रबंधन को और अधिक कमज़ोर कर दिया है। हमने इरादतन कोई स्पष्ट नीति नहीं अपनाई है, जिससे समय-समय पर राजनीतिक लाभ मिलता रहे। हमें ऐसी नीति की ज़रूरत है जो अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप हो, साथ ही बराबरी के आधार पर भेद-भाव रहित हो। ■

स्वच्छ भारत अभियान या शौचालय अभियान

मैराज फ़ातिमा

आजकल इस 'स्वच्छ' शब्द को कहीं महसूस करें या नहीं लेकिन देख ज़रूर रहे होंगे। हाल ही में हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने नोट बंदी का फ़ैसला लिया और नए नोट 'स्वच्छ भारत - एक कदम स्वच्छता की ओर' के लोगो के साथ आए। उनका कहना है कि देश में स्वच्छता का वायदा किया है जिसका दायरा बढ़ रहा है और देश से भ्रष्टाचार और कालाधन भी साफ़ किया जा रहा है। अब नोट बंदी असल में कितनी स्वच्छता ला पाती है इसका फ़ैसला हम समय पर छोड़ देते हैं। इस लेख का उद्देश्य स्वच्छ भारत अभियान को गहराई से जानना है।

महात्मा गांधी ने अपने आसपास के लोगों को स्वच्छता बनाए रखने संबंधी शिक्षा प्रदान कर राष्ट्र को एक उत्कृष्ट संदेश दिया था। उन्होंने 'स्वच्छ भारत' का सपना देखा था जिसके लिए वह चाहते थे कि भारत के सभी नागरिक एकसाथ मिलकर देश को स्वच्छ बनाने के लिए कार्य करें। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 2 अक्टूबर 2014 को स्वच्छ भारत अभियान शुरू किया और इसके सफल कार्यान्वयन हेतु भारत के सभी नागरिकों से इस अभियान से जुड़ने की अपील की। इस अभियान का उद्देश्य अगले पाँच वर्ष में देश को खुले में शौच से मुक्त बनाकर स्वच्छ भारत का लक्ष्य प्राप्त करना है ताकि महात्मा गांधी की 150वीं जयंती को इस लक्ष्य की प्राप्ति के रूप में मनाया जा सके। स्वच्छ भारत अभियान सफ़ाई करने की दिशा में प्रतिवर्ष 100 घंटे के श्रमदान के लिए लोगों को प्रेरित करता है। हालांकि आलोचकों का कहना है कि यह योजना नई बोतल में पुरानी शराब जैसी है। यह मिशन पेयजल और स्वच्छता मंत्रालय (स्वच्छ भारत मिशन ग्रामीण), शहरी विकास मंत्रालय (स्वच्छ भारत मिशन शहरी) और मानव संसाधन विकास मंत्रालय (स्वच्छ भारत मिशन स्कूल) द्वारा नियंत्रित किया जा रहा है।

नंबर का खेल

स्वच्छ भारत मिशन शहरी के तहत शुरू में यह घोषणा की गई कि अक्टूबर 2019 तक कुल 1.04 करोड़ व्यक्तिगत घरेलू शौचालयों का निर्माण किया जाएगा लेकिन बाद में इसे घटाकर 66.42

लाख कर दिया गया। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए योजना के पहले साल में 25 लाख घरेलू शौचालय और 1 लाख सामुदायिक शौचालय बनाने का लक्ष्य रखा था। स्वच्छ भारत की सरकारी वेबसाइट के अनुसार नवंबर 2016 में स्वच्छ भारत मिशन शहरी के तहत 26,64,540 व्यक्तिगत शौचालयों, 1,04,802 सार्वजनिक शौचालयों का निमार्ण हुआ और 4,041 शहरों में से केवल 405 शहर ही खुले में शौच से मुक्त हो पाए हैं। लेकिन इंडियन एक्सप्रेस में छपी एक ख़बर के मुताबिक़ शहरी मिशन के तहत पाँच साल में 2.55 लाख सार्वजनिक शौचालयों का निर्माण होना है जिसमें से सितंबर 2016 तक केवल 22 हज़ार सार्वजनिक शौचालय (शहरों में अस्थाई लोगों को ध्यान में रखते हुए सार्वजनिक स्थानों पर बनाए जाने वाले शौचालय) और 76,744 सामुदायिक शौचालय (घरेलू शौचालय के लिए ज़मीन की कमी होने के कारण स्थाई आबादी के लिए सामुदायिक स्थलों पर बनाए जाने वाले शौचालय) ही बन पाए थे (इंडियन एक्सप्रेस, 28 सितंबर, 2016)। सरकार आंकड़ों के आधार पर इस मिशन की सफ़लता दिखाने की कोशिश कर रही है। पेयजल और स्वच्छता मंत्रालय द्वारा जिन इलाक़ों में शौचालय बनने की बात की गई है उनकी सच्चाई अप्रमाणित है। इस बात का पता तब चला जब उन क्षेत्रों में काम करने वाली संस्थाएँ समुदायों को शौचलयों के उपयोग के बारे में बताने के लिए गईं और उस जगह पर शौचालय गायब पाये (द वायर, 27 मई, 2015)। इसके अलावा जो लक्ष्य हमें पहले साल में पूरा करना था वह हम दो साल में पूरा कर पाए हैं। सरकार की तरफ़ से जारी शौचालयों की संख्या अकेले स्वच्छ भारत मिशन की सफ़लता का सूचक नहीं बन सकती क्योंकि इसमें वह शौचालय भी शामिल हैं जिनका निर्माण पहले से चली आ रही योजनाओं के तहत हुआ है (इंडियन एक्सप्रेस, 2 अक्टूबर, 2015)। पेयजल और स्वच्छता मंत्रालय द्वारा जारी प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार 1 अक्टूबर 2016 तक 2.4 करोड़ शौचालय बने थे जिसमें से 15.04 लाख शौचालयों का निर्माण मनरेगा के अंतर्गत हुआ।

स्वच्छ भारत मिशन ग्रामीण के तहत नवंबर 2016 तक 27,738,748 घरेलू शौचालय और दिसंबर 2016 के पहले हफ़्ते तक कुल 6.08 लाख गाँवों में से 1,26,900 गाँव ही खुले में शौच से मुक्त हो पाए हैं। किसी भी गाँव या शहर को शौच मुक्त करने के लिए सितंबर 2015 के दिशा-निर्देश के अनुसार ग्राम पंचायत स्वयं घोषणा कर सकती है खुले में शौच मुक्त होने की। सत्यापन दो चरण में होता है। पहला तीन महीने पर, दूसरा छह महीने पर। इस घोषणा के अनुसार सत्यापन की ज़िम्मेदारी राज्य की होती है जिसके लिए कोई एक ग्राम पंचायत या गाँव का चयन होता है। सत्यापन की टीम राज्य की अपनी भी हो सकती है और किसी दूसरी एजेंसी से भी करवा सकते हैं जिसमें पत्रकारों सहित ग़ैर-सरकारी स्वतंत्र प्रतिष्ठित लोगों का होना बेहतर है।

कई ऐसे मामले भी सामने आए हैं जहाँ शौचालयों के होने के बावजूद उनका उपयोग नहीं हो रहा। इसके विभिन्न कारण हैं- व्यक्तिगत, पारंपरिक और सांस्कृतिक। दानियावन ब्लॉक, पटना से लगभग ३० कि.मी. दूर है। यहाँ घरों में नए शौचालय बनने के बावजूद गाँव के कुछ बुज़ुर्ग खेतों में ही शौच के लिए जाते हैं। जब स्वच्छता कार्यकर्ताओं ने वजह पूछी तो बोले कि 'जहाँ हमारी बहुएँ जाती हैं, हम वहाँ कैसे जा सकते हैं?'

शौचालयों की गिनती पर ज़ोर, अनदेखी हुई व्यवहार में बदलाव की ओर

स्वच्छ भारत अभियान में केवल शौचालयों के निर्माण की ही बात नहीं है बल्कि इसमें शहरों को खुले में शौच से मुक्त करना, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन और सूचना, शिक्षा और संचार है। हालांकि सरकार का ज़्यादातर ध्यान केवल शौचालयों के निर्माण तक ही सीमित है। लेकिन सिर्फ़ शौचालयों के निर्माण से स्वच्छता हासिल करने की भूल निर्मल भारत अभियान जैसी योजनाओं में हम पहले भी कर चुके हैं।

कई ऐसे मामले भी सामने आए हैं जहाँ शौचालयों के होने के बावजूद उनका उपयोग नहीं हो रहा। इसके विभिन्न कारण हैं - व्यक्तिगत, पारंपरिक और सांस्कृतिक। दानियावन ब्लॉक पटना से लगभग 30 कि. मी. दूर है। यहाँ घरों में नए शौचालय बनने के बावजूद गाँव के कुछ बुज़ुर्ग खेतों में ही शौच के लिए जाते हैं। जब स्वच्छता कार्यकर्ताओं ने वजह पूछी तो बोले कि 'जहाँ हमारी बहुएँ जाती हैं हम वहाँ कैसे जा सकते हैं?'(इंडियन एक्सप्रेस, 5 जुलाई, 2016)।

भारत को 2019 तक खुले में शौच मुक्त बनाने के लिए शौचालयों

के निर्माण के साथ-साथ लोगों के व्यवहार में परिवर्तन लाने की ज़्यादा ज़रूरत है। लेकिन बजट देखें तो अधिकतर व्यय निर्माण गतिविधियों पर हुआ है। स्वच्छ भारत मिशन ग्रामीण के लिए 9,000 करोड़ की राशि दी गई। फरवरी 2016 तक सरकार द्वारा आवंटित राशि का कुल 49 प्रतिशत ही निर्गत किया गया। अप्रैल 2015 से फरवरी 2016 के बीच हुए व्यय का 97 प्रतिशत व्यक्तिगत घरेलू शौचालयों में ख़र्च हुआ और केवल 1 प्रतिशत ही सूचना, शिक्षा और संचार पर ख़र्च हुआ (स्वच्छ भारत अभियान-ग्रामीण, बजट ब्रीफ़, सीपीआर)।

सेस ने बढ़ाया आवंटन लेकिन फिर भी राज्यों को मिले पैसे कम

वित्तीय वर्ष 2015-16 के शुरूआत में भारत सरकार ने ग्रामीण स्वच्छता के लिए 2,625 करोड़ रुपये आवंटित किए। जुलाई और दिसंबर में अनुपूरक बजट पास करके 0.5 प्रतिशत स्वच्छता सेस से संशोधित आवंटन 6,525 करोड़ कर दिया गया। अगस्त 2015 में इकोनॉमिक एंड पोलिटिकल वीकली में छपे एक लेख के अनुसार इस अभियान की कामयाबी के लिए केंद्रीय बजट का एक बटा छह हिस्सा चाहिए। पाँच साल में इसके लिए 1 लाख 96 हजार करोड़ रुपये और हर साल 39,000 करोड़ की ज़रूरत होगी। 2014-15 में निर्मल भारत अभियान, राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल कार्यक्रम के लिए 15,260 करोड़ दिया गया। 2015-16 में पेयजल एवं सफ़ाई मंत्रालय को 6,244 करोड़ मिला है और स्वच्छ भारत मिशन को 6,525 करोड़ मिला है। यानी एक साल में जितना पैसा चाहिए उसका आधा भी केंद्र सरकार ने नहीं दिया है।

इस मिशन के लिए बजट भारत सरकार और राज्य सरकारों के बीच बातचीत की प्रक्रिया के माध्यम से निर्धारित होते हैं। यह बातचीत ग्राम पंचायत के स्तर पर बने वार्षिक कार्यान्वयन की योजना पर आधारित होती है। यह योजना राज्य स्तर पर समेकित होती है। सेस के द्वारा आवंटन में बढ़ोत्तरी के बावजूद राज्य सरकारों को फरवरी 2016 तक कुल आवंटन का केवल 49 प्रतिशत ही दिया गया। राज्यों के पास कम पैसा होने के परिणामस्वरूप व्यय के आंकड़ों में सुधार आता है जिसे मिशन की सफलता के सूचक की तरह दिखाया जा सकता है।

स्वच्छ भारत के ग्रामीण घटक के लिए विश्व बैंक ने समर्थन परियोजना के तहत 150 करोड़ का ऋण भी दिया है।

सीएसआर फ़ंड को आकर्षित करने के लिए स्वच्छ भारत कोष नवंबर 2014 में स्थापित किया गया था। हालांकि स्वच्छ भारत कोष को कंपनियों की तरफ़ से गर्मजोशी देखने को नहीं मिली। अगस्त 2016 तक इस कोष में दान और ब्याज़ के माध्यम से 444.69 करोड़ ही जमा हो पाए हैं। जो पिछले साल की तुलना में 100 करोड़ कम हैं। 23 नवंबर को इंडियन एक्सप्रेस में छपी रिपोर्ट के अनुसार 2014-15 में चोटी की 50 कंपनियों ने 4,600 करोड़ सीएसआर के तहत ख़र्च किये। इनमें से बड़ा पैसा स्कूल, स्वास्थ्य, खेती, सफ़ाई, ट्रेनिंग, पर्यावरण पर ख़र्च हुआ, यानी सीएसआर का फंड बहुत कम है और इसमें से भी स्वच्छ भारत को नहीं मिल रहा है (बिज़नेस लाइन, 18 अक्टूबर, 2016)।

स्वच्छ भारत अभी दूर है

2015 में राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय द्वारा किए गए सर्वेक्षण के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में 46 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में 50 प्रतिशत शौचालय ही उपयोग में आए थे। सर्वे करने वालों ने पाया कि ग्रामीण क्षेत्रों में शौचालयों को अनाज के भंडारण और सामान्य भंडारण के रूप में भी इस्तेमाल किया जा रहा है। इसके अलावा सीपीआर नाम की संस्था द्वारा सर्वे किया गया जिसमें बिहार, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान के 10 ज़िलों के 7,500 ग्रामीण परिवार शामिल थे। इस सर्वे के अनुसार प्रबंधन सूचना प्रणाली (एमआइएस) में दिए गए घरों में शौचालय हैं या नहीं इसकी पुष्टि नहीं की जा सकती। लगभग 29 प्रतिशत ऐसे घर मिले जिनमें एमआइएस के अनुसार शौचालय बना लेकिन वास्तव में वहाँ शौचालय नहीं था। 36 प्रतिशत घरों में शौचालय तो थे लेकिन वह उपयोग के लायक़ नहीं थे।

स्वच्छ भारत अभियान के दिशा-निर्देश के अनुसार हर वह घर जो शौचालय निर्माण का पात्र है और प्रोत्साहन अनुदान की मांग करता है वह सरकार की तरफ़ से 12,000 रुपये का हक़दार है लेकिन सर्वे में 40 प्रतिशत ऐसे घर मिले जिनका नाम एमआइएस की लिस्ट में तो था लेकिन उन्हें कोई राशि नहीं मिली (अकाउंटेबिलिटी इंडिया, 4 अक्टूबर, 2016)।

दरअसल इस मिशन को सफ़ल बनाने के लिए शौचालयों पर ज़ोर देने के साथ साथ व्यवहार में बदलाव और मूल्यांकन प्रणाली को बेहतर बनाने की ज़रूरत है ताकि काग़ज़ के आंकड़ों और ज़मीनी कार्यवाही में अंतर कम हो सके और ज़्यादा से ज़्यादा लोग इस मिशन में शामिल होकर भारत को स्वच्छता की ओर ले जा सकें। ■

मेक इन इण्डिया: संभावना और आशंका

शगुन थपलियाल

मेक इन इंडिया, भाजपा के नेतृत्व वाली राजग सरकार के प्रमुख घरेलू विनिर्माण उद्योग को बढ़ावा देने और विदेशी निवेशकों को भारतीय अर्थव्यवस्था में निवेश के लिए आकर्षित करने का अभियान है। 25 सितंबर 2014 को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा नयी दिल्ली में मेक इन इंडिया कार्यक्रम की शुरुआत की गयी। मेक इन इंडिया भारत में निवेश करने के लिए पूरे विश्व से मुख्य व्यापारिक निवेशकों को बुलाने की पहल है। देश में किसी भी क्षेत्र में (उत्पादन, टेक्सटाइल्स, ऑटोमोबाइल्स, निर्माण, खुदरा, रसायन, आईटी, बंदरगाह, दवा, अतिथि सत्कार, पर्यटन, स्वास्थ्य, रेलवे, चमड़ा आदि) अपने व्यापार को स्थापित करने के लिये सभी निवेशकों के लिये यह एक बड़ा अवसर है।

एक वैश्विक व्यापारिक दृष्टि से देश को बदलने के लिये इस राष्ट्रीय कार्यक्रम को डिज़ाईन किया गया है। देश के युवाओं की स्थिति को सुधारने के लिये लगभग 25 क्षेत्रों में कौशल को बढ़ाने के साथ ही इस अभियान का उद्देश्य बड़ी संख्या में मूल्यवान और सम्मानित नौकरी उत्पन्न करना है। इसमें ऑटोमोबाइल, रसायन, आईटी तथा बीपीएम, विमानन उद्योग, औषधीय, निर्माण, बिजली से संबंधित मशीन, खाद्य प्रसंस्करण, रक्षा, विनिर्माण, अंतरिक्ष, टेक्सटाइल्स, कपड़ा उद्योग, बंदरगाह, चमड़ा, मीडिया और मनोरंजन, स्वास्थ्य, खनन, पर्यटन, रेलवे, ऑटोमोबाईल घटक, नवीकरणीय ऊर्जा, बायोटेक्नोलॉजी, सड़क और हाईवे, इलेक्ट्रॉनिक निकाय और थर्मल ऊर्जा शामिल हैं। इस योजना के सफलतापूर्वक लागू होने से भारत में 100 स्मार्ट शहर प्रोजेक्ट और सस्ते व सुलभ घर बनाने में मदद मिलेगी। प्रमुख निवेशकों की मदद के साथ देश में ठोस वृद्धि और मूल्यवान रोज़गार उत्पन्न करना इसका मुख्य लक्ष्य है।

सरकार ने दावा किया है कि इससे रोज़गार के अवसर बढ़ेंगे जिसका लाभ सीधे-सीधे युवा पीढ़ी को होगा। इससे न सिर्फ़ चुने गए क्षेत्रों का विकास होगा बल्कि अन्य क्षेत्रों में भी सुधार होगा। भारत में उत्पादों के निर्माण के कारण आर्थिक वृद्धि होगी, जिससे न केवल व्यापार बढ़ेगा बल्कि अधोसंरचना अच्छी होगी और नए कारख़ाने स्थापित

होंगे। भारत ने उत्पादों के निर्माण के लिए खुले निमंत्रण के साथ उद्यमियों से प्रतिबंध भी हटा लिया है, जिससे मेक इन इंडिया को तेज़ी से लागू किया जाएगा।

मेक इन इंडिया की वर्तमान स्थिति

'मेक इन इंडिया' को दुनिया भर से अच्छी प्रतिक्रिया मिली है। मोबाइल फ़ोन निर्माता से लेकर ऑटोमोबाइल निर्माता तक सभी ने भारत में 110 लाख करोड़ तक का निवेश करने का प्रस्ताव रखा है। शाओमी मोबाइल ने FOXCONN के साथ मिलकर भारत में दो स्मार्ट फ़ोन का निर्माण करने के लिए निवेश किया। माइक्रोमैक्स ने भारत में अपनी तीन इकाइयाँ खोलने का प्रस्ताव रखा जिसमें 300 करोड़ की लागत आएगी। यह तीन इकाइयाँ राजस्थान, तेलंगाना और आंध्र प्रदेश में खोलने का विचार है जिसमें 3,000 से 3,500 लोग कार्यरत होंगे। जर्मन कंपनी फॉक्सवैगन ने पुणे में अपना एक कारख़ाना बनाने के लिए 720 करोड़ का निवेश किया है। वन प्लस, लावा और सोनी जैसी बड़ी-बड़ी कंपनियों ने भी भारत में खुद को स्थापित करने के लिए 500 करोड़ का निवेश किया। सीमेन जर्मन इंजीनियरिंग कंपनी ने भारत में 7,400 करोड़ रुपये का निवेश किया है जिससे 4 हज़ार नौकरियों में वृद्धि होगी।

FOXCONN ने पश्चिमी भारत में पाँच अरब डॉलर का निवेश करने की योजना की घोषणा की है। एयरबस और ह्युंडई सहित अन्य कंपनियों ने भी अपने वैश्विक विस्तार करने के लिए भारत में बड़े निवेश की घोषणा की है। कुल मिलाकर प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में पिछले 18 महीनों में 39 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। विदेशी निवेश का भारत एक प्रथम गंतव्य बन गया है। यह एक अच्छी ख़बर है, लेकिन नौकरी बढ़ाने में यह कोई मदद नहीं करेगा। देश में अभी 2014-16 तक बस 40 लाख नौकरियों का सृजन हुआ है। इस दर से 2022 तक बस 80 लाख नौकरियों का ही सृजन हो पायेगा जो सरकार के 10 करोड़ के लक्ष्य से बहुत कम है।

मेक इन इंडिया को बढ़ाने, विदेशी निवेश को तीव्र करने और विदेशी कंपनियों को भारत में काम करने के निमंत्रण के साथ सरकार श्रम क़ानून, भूमि अधिग्रहण क़ानून और पर्यावरण क़ानूनों में कई बदलाव ला रही है। लोगों का मत है कि इससे मज़दूरों को सुरक्षा, स्वास्थ्य, आमदनी, सामाजिक सुरक्षा और उनके अनुबंध के संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

श्रम अधिनियम में परिवर्तन

मेक इन इंडिया में जहाँ सरकार का ज़ोर कारोबार में आसानी पर है, उसका सीधा असर श्रमिकों के स्वास्थ्य, सुरक्षा, कल्याण, औद्योगिक दुर्घटना, चिकित्सा, बीमा और सामाजिक सुरक्षा पर पड़ रहा है। विशेषज्ञों के अनुसार श्रम अधिनियम में परिवर्तन से सकारात्मक से ज़्यादा नाकारात्मक प्रभाव पड़ेंगे। औद्योगिक विवाद अधिनियम में प्रस्तावित संशोधन के मुताबिक कंपनियाँ अपने 300 कर्मचारियों को सरकार की अनुमति के बिना निकाल सकती हैं, पहले यह संख्या 100 थी। एक मज़दूर संघ को बनाने के लिए जहाँ पहले केवल 10 प्रतिशत कर्मचारियों के हस्ताक्षर की ज़रूरत थी उसको बढ़ाकर 30 प्रतिशत कर दिया है, जिससे एक मज़दूर संघ बनाने में अब काफ़ी मुश्किलें आऐंगी। इसके अनुसार बिना बिजली वाले उद्योग कारख़ानों में श्रमिकों की संख्या 10 से बढ़ाकर 20 कर दी है और बिजली वाले उद्योग कारख़ानों में श्रमिकों की संख्या 20 से बढ़ाकर 40 कर दी है जिससे उनके व्यवसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण पर असर पड़ेगा। इसका प्रभाव अनुबंध श्रमिकों पर भी पड़ा है जो अक्सर ग़रीब प्रवासी होते हैं। इसके अनुसार कोई भी उद्योग 50 से कम अनुबंध श्रमिकों को काम पर नहीं रख सकता, यह सीमा पहले 20 थी।

भूमि अधिग्रहण क़ानून

इस नियम के अनुसार सार्वजनिक उद्देश्य और औद्योगीकरण के लिए सरकार किसानों से उनकी भूमि का अधिग्रहण कर सकती है। पिछले कुछ दशकों में उद्योगों और सेवा क्षेत्र में बहुत तेज़ी से वृद्धि हुई है जिसके लिए किसानों और आदिवासियों को उनकी भूमि से निष्कासित किया गया है। मानव अधिकार पर भारतीय कार्यकारी समूह और संयुक्त राष्ट्र कार्यकारी समूह की 2012 की संयुक्त रिपोर्ट के अनुसार आज़ादी से अब तक लगभग 6.5 करोड़ लोगों को विकास परियोजनाओं के चलते विस्थापित किया गया है। इन लोगों में अधिकांश ग़रीब, किसान और आदिवासी हैं। 2013 में यूपीए सरकार द्वारा अधिग्रहण क़ानून 2013 लाया गया जो इस संघर्ष को हल करने का प्रयास था। इस क़ानून के अनुसार किसी भी निजी परियोजना में प्रभावित भूमि में ग्राम सभा के 70 प्रतिशत सदस्यों की सहमति, सार्वजनिक परियोजना में 80 प्रतिशत किसानों की सहमति अनिवार्य है और किसी भी भूमि के अधिग्रहण से पहले परियोजना के सामाजिक प्रभाव का आकलन (एसआइए) करवाना अनिवार्य है। परंतु मेक इन इंडिया को आसान बनाने के लिए और उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहित करने के लिए भूमि के अधिग्रहण में सामाजिक प्रभाव के आकलन को वैकल्पिक कर दिया गया है। एसआइए

निजी अस्पतालों, विश्वविद्यालयों, ग्रामीण बुनियादी ढांचे में सुधार, रक्षा और रक्षा के उत्पादन और किफ़ायती आवास पर नहीं किया जायेगा। और यदि कोई सरकारी कर्मचारी या विभाग का प्रमुख कुछ अपराध करता है तो उसके ख़िलाफ़ कोई भी किसान बिना सरकार की पूर्व मंजूरी के मुक़दमा नहीं कर सकता। यह नियम किसानों को भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया में कुछ भी कहने से वंचित करता है।

कौशल विकास

कौशल विकास पर राष्ट्रीय नीति 2009 के अनुसार 50 करोड़ लोगों को सुधार कौशल और ज्ञान के माध्यम से राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दिलाने का लक्ष्य है। जिससे वैश्विक बाज़ार में भारत की प्रतिस्पर्धा सुनिश्चित हो जाएगी। परंतु मानव संसाधन मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार 2012 से 2022 तक पूरे देश में 12.03 करोड़ कुशल युवाओं की ज़रूरत है जो वर्तमान स्थिति से चार गुना ज़्यादा है, इसलिए सरकार को कौशल में सुधार के बुनियादी ढांचे के विस्तार की आवश्यकता है। सरकार की अन्य चुनौतियाँ हैं- अनुसंधान, विकास, गुणवत्ता का आश्वासन और प्रमाणीकरण।

प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना के अंतर्गत 24 लाख युवाओं को प्रशिक्षित करने का प्रस्ताव है। नेहरू युवा केंद्र संगठन के साथ मिलकर प्रशिक्षण देने के लिए देशभर में 100 जगहों पर विशेष शिविर बनाए गए हैं। इस योजना की शुरुआत में देश के 1000 केंद्रों की स्थापना की गई है जिसमें 50 हज़ार युवाओं को 25 विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण दिया जाएगा। इस योजना के अंतर्गत 34 लाख युवाओं को 5000 से 1.5 लाख तक का ऋण दिया जायेगा। अभी तक साल 2015 से 2016 में 1.06 करोड़ युवकों को प्रशिक्षित किया गया जो पिछले साल से 36.8 प्रतिशत ज़्यादा है। इस योजना ने अभी तक 20 लाख युवाओं को प्रशिक्षित किया है जिसमें 40 प्रतिशत महिलाएँ शामिल हैं। देशभर में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों की संख्या 10,750 (मई 2014) से बढ़कर 13,105 (मई 2016) हो गई है।

पर्यावरण क़ानून में बदलाव

क. *आदिवासियों का औद्योगिक विकास का विरोध करने का अधिकार रद्द*- वन अधिकार अधिनियम के अनुसार कोई भी औद्योगिक निर्माण ग्राम सभाओं को पूर्व सूचना और सहमति के नहीं हो सकता। वर्तमान सरकार आदिवासियों के इस अधिकार को निरस्त करने में लगी हुई है।

ख. *कोयला खनन को सार्वजनिक सुनवाई से छूट*- पर्यावरण मंत्रालय ने प्रतिवर्ष 16 लाख टन तक कोयला बनाने वाली खान के विस्तार को सार्वजनिक सुनवाई से मुक्त कर दिया है। जिसके रहते स्थानीय लोगों को निर्णय लेने से बाहर रखा जाएगा और उनको विरोध करने का काई भी मंच नहीं दिया जाएगा।

ग. *गंभीर रूप से प्रदूषित इलाक़ों में उद्योगों को बनाने का प्रतिबंध हटा*- सितंबर 2013 में यूपीए सरकार के अनुसार किसी भी उद्योग का निर्माण पर्यावरण मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के द्वारा बनाए गए पर्यावरण प्रदूषण सूचक के बिना नहीं होगा। परंतु इस समीक्षा के समाप्त होने से पहले वर्तमान सरकार ने 8 भयंकर रूप से प्रदूषित जगहों पर उद्योगों का निर्माण किया जिनके नाम हैं- ग़ाज़ियाबाद, इंदौर, झारसुगुड़ा, लुधियाना, पानीपत, सिंगरौली और वापी।

घ. *पर्यावरण मानदंडों को गिराया और राष्ट्रीय पार्कों के क़रीब उद्योग बनाने की अनुमति दी*- पर्यावरण मंत्रालय ने पर्यावरण प्रभाव के आकलन के नियमों में प्रावधान करके राष्ट्रीय पार्कों के संरक्षित क्षेत्र में पाँच किलो मीटर के दायरे के अंदर निर्माण की अनुमति दे दी है। अब मंत्रालय किसी भी निर्माण के लिए छः नहीं चार मापदंडों का उपयोग करेगा जो इस प्रकार हैं- वन प्रकार, जैविक समृद्धि, वन्य जीवन मूल्य, वन आवरण के घनत्व, परिदृश्य की अखंडता और हाईड्रोलॉजिकल मूल्य। पर्यावरण मंत्रालय ने सड़क, रेल और अन्य लोक निर्माण परियोजनाओं के लिए वन क्षेत्र में पेड़ काटने के नियमों में भी ढील दी है।

ड. *एनजीटी के दायरे गिराये गए*- एनजीटी भारत की पहली संस्था है जो सुप्रीम कोर्ट से पहले पर्यावरण मंजूरी के लिए चुनौतियों को सुनता है। अब सरकार एनजीटी की शक्तियों में कटौती करने का विचार कर रही है।

च. *नई पर्यावरण समिति का गठन*- भारत के महत्वपूर्ण पाँच पर्यावरण क़ानूनों में परिवर्तन के लिए एक समिति का गठन किया गया है।

'मेक इन इंडिया' एक महत्वाकांक्षी परियोजना है। कई योजनाओं के लिए पर्यावरण मंजूरी एक विवादस्पद मुद्दा है। उद्योगों की स्थापना के लिए भूमि अधिग्रहण अपेक्षित है जो विस्थापन बनाम विकास की कठिनाई को और गहरा रहा है। कुशल श्रम शक्ति अनिवार्य है और इस क्षेत्र में बहुत बड़े मौद्रिक समर्थन की आवश्यकता है क्योंकि भारत में केवल 12 प्रतिशत युवा ही प्रशिक्षित हैं। ■

खतरे मे विश्व धरोहर सुंदरवन

नदीम अहमद

भारत और बांग्लादेश की सरकारों के बीच 1320 मेगावाट का कोयला संचालित रामपाल पावर स्टेशन स्थापित करने का समझौता हुआ है। 12 जुलाई 2016 को सम्पन्न यह समझौता दोनो देशों की सरकारों के बीच अब तक का सबसे बड़ा ऊर्जा समझौता है, जिसके तहत भारत का राष्ट्रीय थर्मल पावर कार्पोरेशन एवं बांग्लादेश पावर डेवलपमेंट बोर्ड मैत्री सुपर थर्मल पावर प्रोजेक्ट के नाम से एक संयुक्त उपक्रम स्थापित करेंगे। यह संयुक्त उपक्रम सुंदरवन के जंगलों से 14 किमी दूर बांग्लादेश के दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्र स्थित रामपाल में लगेगा, जिसके लिये बांग्लादेश सरकार 1834 एकड़ जमीन का अधिग्रहण करने जा रही है। अभी तक इलाक़े के 2000 परिवारों को विस्थापित किया जा चुका है जिनमें अधिकतर दलित हिन्दू पृष्ठभूमि से हैं। परियोजना में आने वाले व्यय का 30 प्रतिशत हिस्सा दोनो सरकारों द्वारा वहन किया जाएगा, शेष लागत के लिये 149 करोड़ अमेरिकी डॉलर का कर्ज़ भारत का एक्सिम बैंक मुहैय्या कराएगा। इंस्टीट्यूट फॉर एनर्जी इकोनॉमिक्स एण्ड फाईनेंशियल एनालिसिस के अनुसार इस परियोजना से उत्पादित बिजली की लागत बांग्लादेश में उत्पादित बिजली की लागत से 32 प्रतिशत ज़्यादा होगी।

इस परियोजना का विरोध दोनों देशों में हो रहा है। बांग्लादेश के प्रगतिशील नागरिक समाज व वामधारा की शक्तियों द्वारा तेल, गैस, खनिज, संपदा, ऊर्जा व बंदरगाहों को बचाने के लिये गठित राष्ट्रीय समिति द्वारा इसके विरोध में 250 किमी लंबा मार्च देश की राजधानी ढाका से सुंदरवन तक निकाला गया व दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों को खुला पत्र लिखकर परियोजना को रद्द करने की मांग की गई। मार्च में भारी तादाद मे बांग्लादेशी जनता, ख़ासकर वहाँ के नवयुवकों ने 'रामपाल परियोजना रद्द करो', 'रक्त देंगे पर सुंदरवन नही देंगे', 'इंडिया गो बैक', 'भारतीय साम्राज्यवाद का नाश हो' जैसे नारे लगाते हुए हिस्सा लिया। भारत में भी इसी वर्ष जनवरी के अंत में सुंदरवन में वनाधिकार, आजीविका और मछुआरों के अधिकारों के मुद्दे पर जनसुनवाई आयोजित की गई थी जिसमें बड़े पैमाने पर वनवासी व मछुआरा समुदाय के लोगों ने अपनी समस्याएँ सुनाईं। दोनों देशों में इस परियोजना के विरोध में चल रहे आंदोलनों का कहना है कि ऊर्जा के तो ढेरों विकल्प हैं लेकिन सुंदरवन का कोई विकल्प नही हैं और यह परियोजना केवल बांग्लादेश की सीमा तक ही सीमित नही है बल्कि उसका बेहद ही नकारात्मक प्रभाव 5

लाख भारतीय मछुआरों की आजिविका और पूरे दक्षिण एशिया के पारिस्थितिकी तंत्र पर पड़ेगा।

रामपाल पावर प्लांट के परिप्रेक्ष्य में किया गया पर्यावरणीय प्रभाव आकलन बताता है कि इस परियोजना से लक्षित 1,320 मेगावाट बिजली का उत्पादन करने के लिये 47.2 लाख टन कोयला प्रतिवर्ष पावर प्लांट में जलेगा। यह संयंत्र प्रतिवर्ष तक़रीबन 180 लाख टन कार्बन डाईऑक्साईड, 7.5 लाख टन फ्लाई ऐश और 2 लाख टन बॉटम ऐश उत्पन्न करेगा जिनमें आर्सेनिक, सीसा, मरकरी, निकिल, वैनेडियम, बेरेलियम, बेरियम, कैडमियम, क्रोमियम, सेलेनियम, और रेडियम जैसी खतरनाक रेडियोएक्टिव धातु मिश्रित होंगी। इसके अतिरिक्त प्लांट 142 टन सल्फर डाईऑक्साईड और 85 टन नाईट्रोजन ऑक्साईड प्रतिदिन उत्सर्जित करेगा। यह प्लांट यदि शुरू होता है तो न्यूनतम 79 लाख टन कार्बन डाईऑक्साईड उत्सर्जन करेगा, जो सुंदरवन की पारिस्थितिकी को बड़े जोखिम में डाल देने के लिये पर्याप्त होगा। बांग्लादेश के पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1997 के अनुसार देश में सल्फर डाईऑक्साईड और कार्बन डाईआक्साईड की कृत्रिम मात्रा का प्रतिशत 30 से अधिक बढ़ना अवैधानिक है। जबकि इस प्लांट के लगने से यह मात्रा 54 प्रतिशत तक पहुँच जाएगी, जो खतरे की सीमा से लगभग दोगुना है और मैंग्रोव वनों का विनाश करने के लिए काफ़ी है।

पावर प्लांट का टर्बाइन घुमाने के लिये सुंदरवन में बह रही पासूर नदी से 9,150 क्युबिक मीटर पानी प्रति घंटे लिया जाएगा, जिसमें से 4,000 क्युबिक मीटर पानी सोखकर शेष 5,150 क्युबिक मीटर गर्म दूषित पानी नदी में वापस छोड़ा जाएगा। नदी के पानी का प्रति घंटे 4000 क्युबिक मीटर का नुक़सान नदी के खारेपन, उसके बहाव और ज्वार पैटर्न को बदलेगा जो दक्षिण एशिया में पहले से ही बदतर पारिस्थितिकी तंत्र को और असंतुलित करेगा। पावर प्लांट द्वारा छोड़ा गया दूषित पानी नदी के तापमान को बढ़ाएगा तथा उसे जहरीला बना देगा। इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष कोयले व उसके अवशेषों की ढुलाई के लिये 80,000 टन क्षमता के 59 पानी के जहाजों का नदी में आवागमन भी नदी को दूषित करेगा। ढुलाई के दौरान ऐश का नदी में गिरना उसे अधिक जहरीला बनाएगा। नदी में कचरे व भारी धातुओं के रूप में घुला यह ज़हर सुंदरवन की मछलियों, तमाम जन्तुओं व वनस्पतियों के लिए अत्यंत ख़तरनाक होगा। इससे वनवासियों और मछुआरों सहित दोनों देशों के अनुमानतः 4 करोड़ से ज़्यादा लोग सीधे-सीधे प्रभावित होंगे।

सुंदरवन का डेल्टा युनेस्को द्वारा घोषित विश्व धरोहर है जिसका कुछ भाग भारत और कुछ बांग्लादेश में पड़ता है। हिमाच्छादित क्षेत्रों से निकलने वाली नदियों गंगा और ब्रह्मपुत्र द्वारा समुद्र में गिरने से पहले छोटी शाखाओं मे बंटकर इसका निर्माण होता हैं। द्वीपों का यह समूह प्राकृतिक परिवर्तनों और समुद्री ज्वारों को सदियों से झेलते आए विश्व के सबसे बड़े अद्भुत मैंग्रोव वन हैं। ये मैंग्रोव वन धरती और समुद्र के बीच उभय प्रतिरोधी (बफर) का काम करते हुये सामुद्रिक प्राकृतिक आपदाओं से तटों की रक्षा करते हैं। भारी धातु तत्वों को पानी से सोखकर तथा कार्बनिक अपशिष्ट पदार्थों व मिट्टी के कणों को अलग करके पानी को साफ रखते हैं जिससे पानी मे पोषक तत्वों की मात्रा भी बढ़ जाती है। यही कारण है कि इस क्षेत्रों में पूरे तंत्र का 90 प्रतिशत मैगनीज़ व तांबा और लगभग 100 प्रतिशत लोहा, जस्ता, क्रोमियम, सीसा तथा कैडिमयम पाया जाता है। ये वन प्रकाश संश्लेषण के जरिये वातावरण से अच्छी मात्रा में कार्बन डाईऑक्साईड सोखकर वायु में कार्बन का स्थिरीकरण कर जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कई प्रकार के जीवधारी इन वनों मे शरण पाते हैं तथा इनकी जड़ें शैवाल, कीट और मछलियों को आश्रय प्रदान करते हैं। यदि तटों पर मैंग्रोव वन न रहें तो लाखों मछुआरों की आजीविका का साधन मछलियाँ होंगी ही नहीं, या फिर होगीं भी तो संख्या में बहुत ही कम। इस तरह ये वन तमाम तरह के जीव जंतुओं व वहाँ के निवासियों के लिए आवास, आजीविका और तटीय आपदाओं से उनके सुरक्षा की गारंटी हैं। आज जब जलवायु में हो रहे परिवर्तन के कारण दुनियाभर में विनाशकारी तूफान व बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं के चक्र और विभीषिका में काफ़ी तेज़ी आई है, ऐसे में अपनी जड़ों द्वारा मिट्टी को बांधे रखने वाले ये मैंग्रोव वन हमेशा से कहीं ज़्यादा उपयोगी व ज़रूरी हो चले हैं। स्पष्ट है कि 1320 मेगावाट का कोयला संचालित विद्युत संयंत्र इस विश्व धरोहर की पूर्णरूपेण बर्बादी की इबारत लिखेगा।

जहाँ एक ओर भारत की सरकार जलवायु परिवर्तन को दूर करने के लिए लोगों की जीवनशैली में बदलाव, स्वच्छ ऊर्जा और वानिकी को बढ़ावा दे रही है, वहीं दूसरी ओर इस परियोजना में बांग्लादेश को सहयोग करके सुंदरवन को नष्ट करने के प्रयास में भी भागीदार है। यह भारत की सोच पर प्रश्नचिन्ह लगाता है। हालांकि यह भी सच है कि बांग्लादेश में बिजली की कमी विकास में एक बड़ा अवरोध है। ऐसी परिस्थिति में सरकारों का कर्तव्य यह है कि वह विकास और पर्यावरण में यथोचित सामंजस्य बनाए। सरकारों द्वारा अभी लिए गए निर्णय ही भविष्य में सतत् विकास की दिशा और दशा तय करेंगे। ■

पैरवी गतिविधियाँ

कॉप में पैरवी और बियोंड कॉपनहेगन

पैरवी और बियोंड कॉपनहेगन ने जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र की जलवायु फ्रेमवर्क कन्वेंशन की 22वीं अंतर्राष्ट्रीय बैठक में हिस्सा लिया। कॉप में बियोंड कॉपनहेगन और पैरवी की तरफ़ से तीन मुख्य आयोजन किए गए। पर्यावरण मंत्री श्री अनिल माधव दवे द्वारा 'लाइफस्टाइल फॉर मिनिमम कार्बन फुटप्रिंट' का विमोचन, 2020 से पहले के प्रयास और एडेप्टेशन एंड फाइनेंस गैप पर साइड इवेंट।

मिनिमम कार्बन फुटप्रिंट वैश्विक अभियान बने

14 नवंबर को पर्यावरण मंत्री श्री अनिल माधव दवे ने बियोंड कॉपनहेगन, सिकोइडिकॉन व मंत्रालय द्वारा प्रकाशित पुस्तिका 'लाइफस्टाइल फॉर मिनिमम कार्बन फुटप्रिंट' का विमोचन इंडिया पैवेलियन में किया। पुस्तक का विमोचन करते हुए श्री दवे ने कहा कि नीतियों और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के अलावा जलवायु परिवर्तन के समाधान में व्यक्तिगत योगदान का बहुत महत्व है और यह समाधान तब तक सफ़ल नहीं हो सकता जब तक हरेक व्यक्ति न्यूनतम कार्बन खपत की जीवनपद्धति नहीं अपनाता। विश्व के हरेक देश में यह नागरिकों की भूमिका है और यह देश, समाज और क्षेत्र में उतना ही समीचीन है क्योंकि सभी देशों में आंतरिक रूप से कार्बन खपत में काफ़ी ग़ैरबराबरी है। उन्होंने यह भी कहा कि न्यूनतम कार्बन खपत जीवनशैली गाँधीवादी जीवनशैली का प्रतीक है। आज के संदर्भ में भले ही हम इसे किसी भी नाम से जानें। उन्होंने यह भी इच्छा ज़ाहिर की कि इस जीवनशैली को देश में व दुनिया में एक वैश्विक आंदोलन बनाने में ग़ैर-सरकारी संगठनों की बड़ी भूमिका हो सकती है।

'लाइफस्टाइल फॉर मिनिमम कार्बन फुटप्रिंट' पुस्तक में ऐसे उदहारण दिए गए हैं जिससे सामान्य आदमी बिना ज़्यादा कष्ट के अपना कार्बन फुटप्रिंट आसानी से कम कर सकता है। पुस्तक में कई खंड हैं जो भोजन और कृषि, यात्रा, काग़ज़ और बिजली के इस्तेमाल आदि में कार्बन फुटप्रिंट कम करने के आसान उदाहरणों से मानव की मानसिकता और जीवनशैली को पर्यावरण और जलवायु के प्रति सचेत करते हैं।

शमन और अनुकूलन के लिए उपलब्ध राशि में बराबरी हो और अनुकूलन के लिए विकसित देश सरकारी पैसा उपलब्ध कराएं

सिकोइडिकोन, पैरवी और बियोंड कॉपेनहेगन द्वारा पैन अफ्रीका क्लाइमेट जस्टिस नेटवर्क, ऑक्सफेम इंटरनेशनल और इसमुन के साथ मिलकर पेरिस समझौते में अनुकूलन और क्लाइमेट फाइनेंस को पर्याप्त बनाने पर एक साइड इवेंट का आयोजन 10 नवंबर को किया गया। इस साइड इवेंट में 100 से अधिक प्रतिभागी शामिल हुए।

वक्ताओं ने पेरिस समझौते के विभिन्न आयामों में संसाधनों की उपलब्धता और उन्हें बढ़ाने पर अपने विचार रखे। अजय झा (पैरवी और सिकोइडिकोन) ने अनुकूलन और क्लाइमेट फाइनेंस पर कॉप 22 में चल रही चर्चाओं से अवगत कराते हुए कहा कि कॉप 22 में ज़्यादा ध्यान शमन पर दिया जा रहा है और पेरिस समझौते में तय किए गए अनुकूलन और संसाधन के प्रावधानों को कैसे लागू किया जाएगा, इस पर कोई ख़ास गंभीरता नहीं दिखी। उन्होंने यह भी कहा कि अनुकूलन

कोष जो विकासशील देशों के लिए सबसे मददगार साबित हुआ है, उसका खुद का अस्तित्व संसाधन की कमी के चलते ख़तरे में है। अजय झा ने 2020 के पूर्व के प्रयासों के महत्व पर ज़ोर देते हुए कहा कि पेरिस समझौते की सफलता के लिए इसके लागू होने से पहले के प्रयासों को तय करने की आवश्यकता है। 2020 से पहले के प्रयासों के बिना 2030 तक सतत् विकास लक्ष्यों को पाना बहुत कठिन होगा।

पैन अफ्रीका क्लाइमेट जस्टिस नेटवर्क के मिथिका मवेंडा ने कहा कि अनुकूलन अफ्रीका के लिए अत्यंत आवश्यक है और इसलिए विकसित देश क्लाइमेट फाइनेंस और उसमें अनुकूलन के लिए संसाधन शीघ्र बढ़ाएँ।

ऑक्सफेम वियतनाम से वु चिन्ह हाई ने पाँच देशों में किए गए एक शोध के हवाले से बताया कि इन देशों में जलवायु परिवर्तन से होने वाली आर्थिक क्षति बढ़ रही है लेकिन छोटे और मझोले किसानों के पास अनुकूलन के लिए कोई सहायता राशि नहीं पहुँच रही। उन्होंने ध्यान दिलाया कि ज़्यादातर क्लाइमेट फाइनेंस अधोसंरचना बेहतर करने में इस्तेमाल की जा रही है, जिससे अनुकूलन के लिए बहुत मामूली संसाधन उपलब्ध हैं।

साउथ सेंटर, जिनेवा की मरियामा विलियम्स ने कहा कि अनुकूलन और क्षतिपूर्ति के लिए संसाधन उपलब्ध कराने में विकसित देश अपने वायदों के बावजूद कोई ख़ास रुचि नहीं दिखा रहे हैं जो काफी निराशाजनक है। पेरिस समझौते में कहा गया है कि शमन और अनुकूलन के लिए आर्थिक सहायता में बराबरी और सामंजस्य होगा, लेकिन इसके विपरीत अभी भी अनुकूलन के लिए बहुत कम राशि उपलब्ध है। सभी वक्ताओं ने माँग की कि पेरिस समझौते के अनुसार-

- शमन और अनुकूलन के लिए उपलब्ध राशि में बराबरी हो और अनुकूलन के लिए विकसित देश सरकारी पैसा उपलब्ध कराएँ।
- अनुकूलन कोष को टिकाऊ और दीर्घकालिक बनाया जाए और उसकी आर्थिक स्थिति को मज़बूत किया जाए।
- विकसित देश 2020 तक 20 हज़ार करोड़ अमरीकी डॉलर की सहायता उगाहने पर अपने विचार, योजना और रोड मैप उपलब्ध कराएँ।

2020 से पूर्व के प्रयास पर निर्भर है पेरिस समझौते की सफ़लता

2020 के पूर्व जलवायु नियंत्रण के प्रयास व महत्वाकांक्षा पर पैरवी, सिकोइडिकोन और बियोंड कॉपनहेगन द्वारा 14 नवंबर को पुस्तक विमोचन के बाद इस चर्चा का आयोजन किया। इस चर्चा में वन, पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के माननीय मंत्री श्री अनिल माधव दवे, बोलिविया के उपमंत्री श्री डिएगो, पर्यावरण मंत्रालय के सचिव श्री अजय नारायण झा, थर्ड वर्ल्ड नेटवर्क से मीना रमन, एरासमस विश्वविद्यालय रॉटरडेम से श्री पीटर शॉल्टेन और बियोंड कापॅनहेगन से श्री सौम्या दत्ता ने 2020 से पूर्व जलवायु संकट के नियंत्रण के प्रयास और महत्वाकांक्षा के विभिन्न पहलुओं पर अपनी बात रखी। श्री अनिल माधव दवे ने कहा कि भारत का मानना है कि 2020 के पूर्व से होने वाले प्रयास ही 2020 के बाद पेरिस समझौते के सफ़ल क्रियान्वयन की सीढ़ी होंगे। 2020 के पूर्व विकसित देशों को अपने वायदे के मुताबिक उत्सर्जन कम करने के प्रयास और संसाधन उपलब्ध कराने के प्रयास में गति लानी चाहिए। ऐसे प्रयास ही जलवायु संतुलन में न्याय और समता के सूचक होंगे। भारत अन्य देशों के साथ मिलकर इसकी ज़ोरदार वकालत कर रहा है और करता रहेगा। मंत्रालय के सचिव श्री अजय नारायण झा ने कहा कि विज्ञान के निष्कर्षों और अपेक्षा के अनुरूप 2020 से पहले के प्रयास न सिर्फ़ शमन बल्कि प्रभावी अनुकूलन के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध होंगे।

चर्चा की शुरुआत करते हुए श्री अजय झा ने कनकून, डरबन और दोहा सम्मेलनों का हवाला देते हुए बताया कि वहाँ तय हुए निर्णयों का विकसित देशों द्वारा अनुपालन न करना, फ्रेमवर्क कन्वेंशन की आत्मा और पेरिस समझौते की मंशा के विपरीत है। सारे वैज्ञानिक, सामाजिक और आर्थिक साक्ष्य इस बात को रेखांकित करते हैं कि 2020 के पहले के मज़बूत प्रयास से तापमान वृद्धि को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक रोकने की संभावना बनी रहेगी अन्यथा नहीं।

बोलिविया के उपमंत्री और एलएमडीसी के कॉर्डिनेटर श्री डिएगो पकेहो ने कहा कि यह बहुत निराशाजनक है कि 2020 के पूर्व के प्रयासों और बातचीत पर कोई प्रगति नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि विकासशील देशों का यह मानना है कि अगर 2020 के पूर्व मज़बूत क़दम नहीं उठाए गए तो 2020 के बाद विकासशील देशों के प्रयास करने के लिए बहुत उत्साह नहीं रहेगा।

श्री सौम्या दत्ता ने विकसित और विकासशील देशों में पुराने कोयले से चलने वाले ऊर्जा संयंत्रों को बंद करके उससे उत्सर्जन कम करने की संभावना पर बल दिया। उन्होंने बताया कि ऐसे संयंत्रों की ज़्यादा संख्या चीन और अमरीका में है जो इस पर पहल करके अपना उत्सर्जन आसानी से कम कर सकते हैं।

श्री पीटर शॉल्टेन ने यूरोप और अपने देश नीदरलैंड द्वारा 2020 के पूर्व मज़बूत प्रयासों के अभाव पर अपनी चिंता प्रकट की। उन्होंने कहा कि इन देशों में 2020 से पहले उत्सर्जन कम करने की काफ़ी संभावनाएँ हैं लेकिन यह देश इस पर कोई क़दम नहीं उठा रहे हैं।

चर्चा के अंत में सभी प्रतिभागियों ने विकासशील देशों, कॉप के मेज़बान और राष्ट्रसंघ से अपील की कि वह 2020 के पूर्व के प्रयासों पर एक मज़बूत कार्ययोजना तैयार करें जिसमें विकसित देश अपने यहाँ उत्सर्जन कम करने और वैश्विक सहयोग में महत्वकांक्षी भूमिका निभाएँ। आयोजकों ने एलएमडीसी के पूर्व प्रयासों पर कार्य योजना की मांग करने के अपने रुख़ को और मज़बूत करने के लिए अपील की।

माराकेश कॉप से पहले तैयारी बैठक

कॉप की बैठक से पहले पैरवी और बियोंड कॉपनहेगन ने कॉप की बैठक से मुख्य अपेक्षाओं और संभावनाओं पर दिल्ली में 22 अक्टूबर को एक बैठक की, जिसे पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के माननीय मंत्री श्री अनिल माधव दवे ने संबोधित किया। बैठक के विशिष्ट अतिथि भारत में यूरोपियन दल के प्रमुख श्री टोमेज़ कॉज़लोस्की थे। इसके अतिरिक्त श्री रवि शंकर प्रसाद, संयुक्त सचिव, वन, पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने भी बैठक को संबोधित किया। इस बैठक में दिल्ली और आस-पास के राज्यों से 10 संस्थाओं, मीडिया प्रतिनिधि, नीति निर्माता और अकादमिक जगत के लोगों ने हिस्सा लिया। श्री अनिल दवे ने कहा कि भारत की मुख्य अपेक्षा विकासशील देशों के लिए तकनीक और संसाधन उपलब्ध कराना और 2020 से पहले होने वाले प्रयासों को तेज़ और सशक्त कराना है। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि न्यूनतम कार्बन फुटप्रिंट की जीवनशैली जलवायु संकट के समाधान का मूलमंत्र है और भारत इस विषय पर एक वैश्विक सहमति बनाने और अधिक से अधिक लोगों को इस अभियान से जोड़ने का प्रयास करेगा।

पैरवी से अजय झा ने कहा कि पेरिस समझौते के कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर निर्णय लेने के उद्देश्य से माराकेश कॉप काफ़ी अहम है। माराकेश कॉप की बड़ी चिंताओं के बारे में बताते हुए श्री झा ने कहा कि पेरिस समझौते के तौर तरीकों के कार्यान्वयन के अलावा 2020 के पूर्व के प्रयासों में भी कमी है जिसे दरकिनार कर दिया गया है और उस पर कोई चर्चा नहीं हो रही है।

श्री रवि शंकर प्रसाद ने कहा कि पेरिस समझौते को सफ़ल बनाने के लिए सभी देशों को मिलकर ज़मीनी स्तर पर काम करना होगा। उन्होंने कहा कि कॉप प्रेसिडेंसी ने माराकेश के मुख्य परिणाम के रूप में ग्लोबल एक्शन एजेंडा बनाने की योजना की है जहाँ सभी हितधारक, नागरिक समाज संगठन और ग़ैर-सरकारी संगठन आदि जलवायु परिवर्तन पर अपने काम को साझा कर सकेंगे।

श्री कॉज़लोस्की ने कहा कि माराकेश में शमन, अनुकूलन, पारदर्शिता, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, क्षमता निर्माण, नुक़सान और क्षति आदि से संबंधित परिणामों की उम्मीद है। उन्होंने कहा कि प्रतिबद्धताएँ तब तक परिवर्तन नहीं लाऐंगी जब तक कि वैश्विक प्रतिबद्धताओं को राष्ट्रीय कार्यों और नीति में एकीकृत नहीं किया जाएगा। उन्होंने जलवायु परिवर्तन को रोकने और पेरिस समझौते को लागू करने के लिए भारत के साथ काम करने की यूरोपियन प्रतिबद्धता को भी दोहराया।

अन्य वक्ताओं ने पेरिस समझौते के संदर्भ में पारदर्शिता ढांचे, 2020 से पूर्व के प्रयास, रेड प्लस, अनुकूलन और क्षति और नुक़सान के लिए फाइनेंस पर चर्चा की।

पीपल्स फ़ोरम ऑन ब्रिक्स ने पेश किया सकारात्मक विकास एजेंडा

इस वर्ष ब्रिक्स की 8वीं बैठक की मेज़बानी भारत ने की। इस बैठक से ठीक दो दिन पहले 13-14 अक्टूबर को गोवा में ब्रिक्स देशों में विभिन्न मुद्दों पर काम कर रहे जन आंदोलनों और ग़ैर-सरकारी संगठनों ने मिलकर दो दिवसीय 'पीपल्स फ़ोरम ऑन ब्रिक्स' का आयोजन किया। सामाजिक आंदोलन, ट्रेड यूनियन, शिक्षाविद् और ग़ैर-सरकारी संगठनों से 500 से अधिक प्रतिभागियों ने भाग लिया और लोगों के संघर्ष, मौजूदा स्थिति के विश्लेषण पर अपने विचार रखे और साथ ही नवउदारवादी व्यवस्था और कॉर्पोरेट वैश्वीकरण के ख़िलाफ़ प्रतिरोध के लिए एकजुट होने पर चर्चा की। पीपल्स फ़ोरम ने ब्रिक्स देशों की सरकारों के विकास की मुख्य धारा के एजेंडे को नकारा जिसमें छोटे और ग़रीब देशों को विकासधारा में लाने के नाम पर उनके संसाधनों पर कब्ज़ा करना है। पीपल्स फ़ोरम ने लोगों के लिए एक सकारात्मक विकास एजेंडा भी प्रस्तुत किया।

पैरवी ने ब्रिक्स देशों में जलवायु परिवर्तन और जलवायु प्रतिबद्धताओं पर चर्चा करने के उद्देश्य से एक साइड इवेंट का आयोजन किया जिसमें पर्यावरण और ऊर्जा के संबंध के महत्व को समझने पर बल दिया गया। इसके अलावा ब्रिक्स देशों में ऊर्जा परियोजनाओं के लिए खनन और वनों की कटाई को पर्यावरण के क्षरण के लिए प्रमुख कारण माना है। इवेंट में मौजूद दक्षिण अफ्रीका के प्रतिनिधि ने दक्षिण अफ्रीका के ऊर्जा स्रोतों और प्रवृत्तियों के बारे में बताया। दरअसल पेरिस समझौते को ग्लोबल वार्मिंग के समाधान के रूप में देखा जा रहा है लेकिन इस समझौते में जीवाश्म ईंधन की खपत पर कोई स्पष्ट प्रतिबंध नहीं लगाया गया है।

शरणार्थियों के लिए व्यापक और समावेशी क़ानून की ज़रूरत

केंद्र सरकार ने 19 जुलाई 2016 को लोकसभा में नागरिकता (संशोधन) विधेयक पेश किया। पैरवी ने पीपल्स सार्क के सहयोग में 7 अक्टूबर को दिल्ली में शरणार्थी संकट और नागरिकता संशोधन क़ानून पर एक चर्चा का आयोजन किया। यह संशोधन नागरिकता अधिनियम 1955 में बदलाव लाएगा। इसके अंतर्गत केवल तीन देशों, पाकिस्तान, अफ़गानिस्तान और बांग्लादेश से आये अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों को नागरिकता देने का प्रावधान है। इसका लाभ उन लोगों को भी मिलेगा

जिनके पास ज़रूरी दस्तावेज़ नहीं हैं या अगर हैं तो उनकी वैधता ख़त्म हो गई है। बिना पासपोर्ट भारत में प्रवेश करने वालों को भी नागरिकता अधिकार मिलेंगे।

चर्चा में इस संशोधन और इससे शरणार्थियों पर पड़ने वाले प्रभाव पर विस्तार से चर्चा हुई। बैठक में जेएनयू के प्रोफ़ेसर महेंद्रा पी लामा, दिल्ली विश्वविद्यालय से नसरीन चौधरी और दक्षिण एशियाई विश्वविद्यालय से नफ़ीस अहमद ने इस विषय पर अपने विचार रखे। श्री लामा ने कहा कि भारत कई पड़ोसी देशों के शरणार्थियों की शरणस्थली रहा है लेकिन इसके बावजूद भारत ने 1951 के शरणार्थी कनवेंशन को अभी तक अंगीकार नहीं किया है और न ही कोई शरणार्थी नीति बनी है। नए संशोधन में केवल तीन देशों के कुछ ही धर्मों के बारे में बात की गई है जो भेदभाव को बढ़ावा देगा। इस नए संशोधन में केवल ग़ैर-क़ानूनी अप्रवासी शब्द का प्रयोग हुआ है। शरणार्थियों के बारे में कोई बात ही नहीं की गई है।

श्रीमती नसरीन चौधरी ने कहा कि भारत अपने ग़ैर-नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करने में विफल रहा है। उन्होंने कहा कि विकसित देश भी प्रवासियों को सीधे नागरिक नहीं बनाता है। प्रवासियों को धार्मिकता के आधार पर नागरिकता का निर्धारण करना विभेदकारी है। श्री नफ़ीस अहमद ने कहा कि कोई भी व्यक्ति शरणार्थी नहीं बनना चाहता लेकिन उसके सामने ऐसी परिस्थितियाँ होती हैं जो उसे शरणार्थी बनाती हैं। उन्होंने कहा कि हमें समग्र शरणार्थी नीति बनानी चाहिए। राजस्थान से आए जय आहूजा ने हिन्दू शरणार्थियों की स्थिति पर चर्चा की। चर्चा के अंत में अध्यक्षता कर रहे वरिष्ठ पत्रकार श्री ओम थानवी ने अपने विचार रखते हुए कहा कि हमें एक व्यापक और समावेशी क़ानून की ज़रूरत है। हम राजनीतिक इच्छा शक्ति पर शरणार्थियों को नहीं छोड़ सकते। सरकार मौजूदा क़ानून को कैसे लागू करेगी यह भी स्पष्ट नहीं है।

जनता की सरकार-जनता के मुद्दे

उत्तर प्रदेश के आगामी विधान सभा चुनाव के मद्देनज़र घोषणा-पत्र के निर्माण की प्रक्रिया को लोकतांत्रिक, जनभागीदारीपूर्ण व समावेशी बनाने की आवश्यकता है। जनता के मुद्दों व जन आकांक्षाओं के अनुरूप जनघोषणा-पत्र बनाने के उद्देश्य से 'जनता की सरकारः जनता के मुद्दे' विषय पर परिचर्चा का अयोजन पैरवी (दिल्ली) द्वारा , बियोंड कोपेनहेगन (दिल्ली), सिकोइडिकोन (जयपुर) और वाराणासी स्थित संस्थाओं विज़न व रिदम के साथ मिलकर किया गया।

उत्तर प्रदेश में विधान सभा चुनाव होने वाले हैं। राजनैतिक दल जनता को लुभाने की हर संभव कोशिश कर रहे हैं और लोग रोज़ नए दावों व वायदों से रूबरू हो रहे हैं। राजनैतिक दलों का दावा है कि प्रदेश का राजनैतिक विमर्श पहचान की राजनीति से विकास की राजनीति की ओर बदल रहा है लेकिन घोषणा-पत्रों में अभी भी कई मुद्दों पर स्पष्टता नहीं है। उत्तर प्रदेश के संदर्भ में इस विषय पर गंभीर विमर्श की आवश्यकता है, ताकि लोगों की आकांक्षाओं को नीति निर्माताओं तक पहुँचाया जा सके और घोषणा-पत्रों के प्रति राजनैतिक दलों का उत्तरदायित्व व जवाबदेही सुनिश्चित की जा सके।

जनघोषणा-पत्र का निर्माण प्रदेश के लोगों की आशाओं और आकांक्षाओं को विकेंद्रीकृत व समावेशी प्रक्रिया से विकसित करने का प्रयास है। हमने प्रदेश में 'जनता की सरकारः जनता के मुद्दे' विषय पर वाराणसी (अक्टूबर) और झांसी (दिसंबर) में परिचर्चा आयोजित की, जिसमें शिक्षा, कुपोषण व स्वास्थ्य, दलित अधिकार, सतत् विकास और जलवायु परिवर्तन, खेती-किसानी, रोज़गार, स्वराज, सुशासन व भ्रष्टाचार जैसे जनता से जुड़े विषयों के साथ-साथ प्रमुख राजनैतिक दलों के घोषणा-पत्रों पर चर्चा की गई। लोगों ने इन मुद्दों पर अपने सुझाव दिए, जिसके आधार पर एक जनघोषणा-पत्र बनाया जा रहा है।

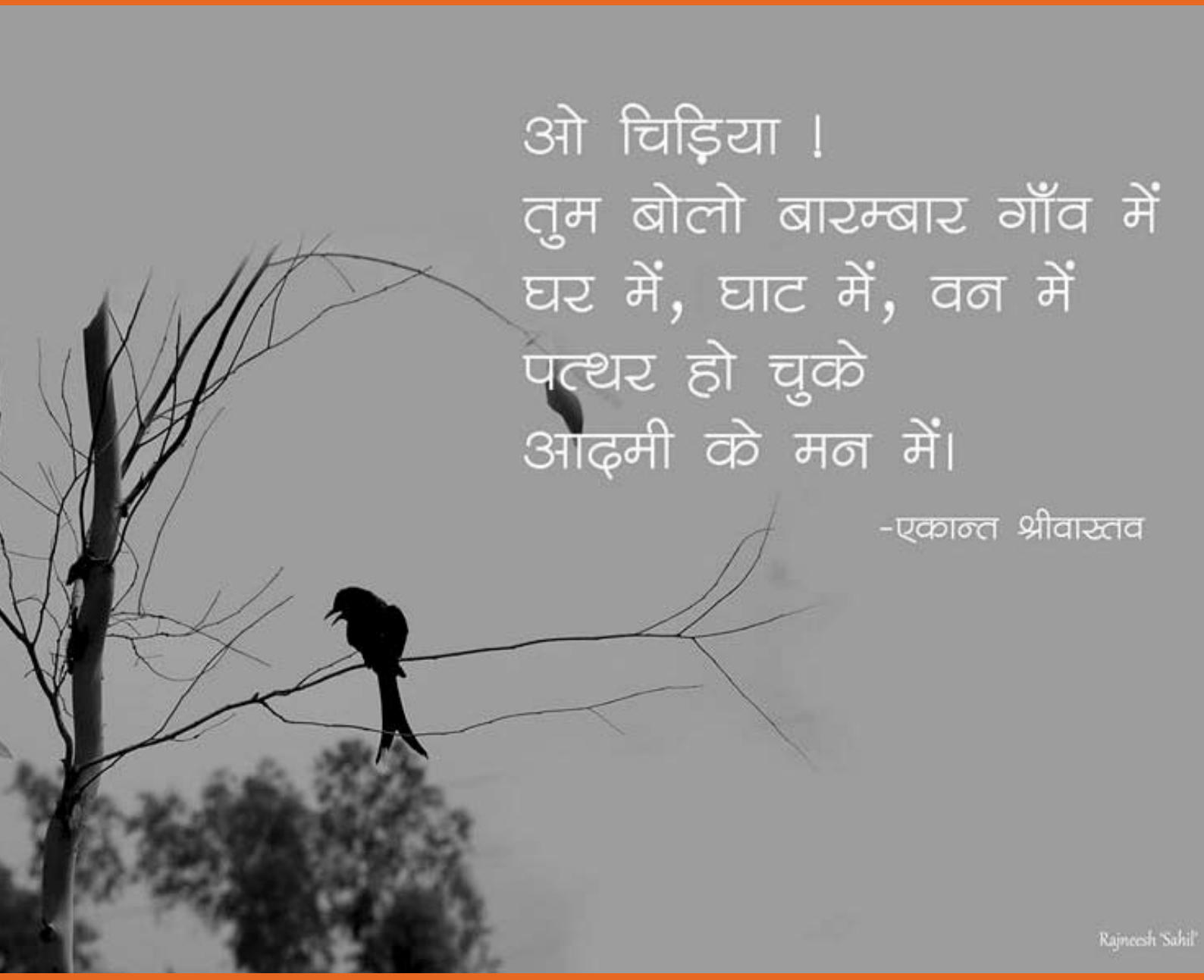

प्रति,

_____

_____

_____

_____

बुक पोस्ट

पैरवी, जी-30, प्रथम तल, लाजपत नगर-3, नई दिल्ली-110024 द्वारा सीमित प्रसार के लिए प्रकाशित
फोनः 011-29841266, 65151897 | ईमेलः pairvidelhi@rediffmail.com, pairvidelhi1@gmail.com | वैबसाइटः www.pairvi.org